IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

उच्च माध्यमिक स्तर के सामान्य एवं सह–शिक्षा विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की महिला सशक्तिकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

डॉ. पाँचूराम मीना
सह–प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
महाराज विनायक ग्लोबल
विश्वविद्यालय, ढ़ण्ड, आमेर, जयपुर

पिंकी जैन
शोधार्थी
राजनीति विज्ञान विभाग

ABSTRACT

बालक के विकास का उत्तरदायित्व माता के व्यवहार व उसके उच्च चरित्र पर निर्भर है। किस प्रकार माता एक देवी रूप में पवित्र प्यार व ममता की छाया में एक बालक का पालन करती है। जिस प्रकार एक कुम्भ कार कच्ची मिट्टी को विभिन्न आकार में ढ़ाल कर नवीन रूप प्रदान करती है। बिल्कुल इसी प्रकार एक नारी ममता, स्नेह और आदर्श व्यक्ति के रूप में देश के गौरव को बढ़ाने वाली बनाती है। यह सत्य है कि भारतवर्ष के ही नहीं वरन् विश्व के जितने भी महान पुरूष हुए हैं, उनकी महानता में उनकी परम–पूज्य माताओं की छवी अंकित है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि किस कदर एक माता अपने बालकों में वीरता का भाव पैदा करती है व उन्हें निर्भय, निडर बना कर उनके चरित्र का विकास करती है। जो वास्तव में जीवन रूपी विशाल भवन की सुदृढ़ नीवं है और इस नीवं को नारी अपने कर्तव्य रूपी हथियार से जमाती है।

की वर्ड – महिला सशक्तिकरण, सह शिक्षा, अभिवृति

प्रस्तावना

नारी के वर्तमान स्वरूप को देखकर किसी ने कभी यह सोचा भी न होगा कि इस पुरूष प्रधान समाज में नारी इतनी उन्नति कर पायेगी या अपना

स्थान सुनिश्चित कर के चार कदम आगे निकल जायेगी। देश के विकास एवं प्रगति में नारी का योगदान सदियों से चला आ रहा है।

निष्ठा और लगन के प्रतीक माने जाने वाले ध्रुव का पालन-पोषण अकेले उनकी माता सुनीति ने वन में ही किया। अपने शिक्षण द्वारा उन्होंने ऐसे संस्कार ध्रुव को दिये कि वह बचपन में ही जीवन के रहस्य को सीख गया। परमात्मा की अनुभूति को धारण कर उन्होंने आगे चलकर देश को कुशल प्रशासक दिया। लव तथा कुश का पालन-पोषण वाल्मीकि के आश्रम में अभावग्रस्त स्थिति में सीता ने ही किया और उन्हें इस योग्य बनाया कि अजेय हनुमान तथा लक्ष्मण को भी उनके सामने पराजित होना पड़ा। शान्तनु के पुत्र भीष्म-पितामह गंगा पुत्र थे, जो कुशल राज्य संचालक थे। उनकी शिक्षा-दीक्षा स्वयं गंगा के निर्देशन में हुई। इसी प्रकार शिवाजी के निर्माण में जीजा बाई का ही हाथ था। भरत जिनके नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा, उनका पालन-पोषण अकेले शकुन्तला ने किया था।[1] इस तरह के अनेक उदाहरण एवं प्रमाण हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि प्राचीन काल में आदर्शवादी नारियों ने अपनी प्रतिभा, क्षमता और योग्यता का लाभ समाज को बढ़-चढ़ कर दिया।

प्रत्येक भारतवासी भगवान श्रीरामचन्द्र और माता सीताजी के जीवन को आदर्श मानता है। प्रत्येक बालिका सीताजी के भव्य आदर्श की आराधना करती है। भारतवर्ष की प्रत्येक स्त्री की यह आकांक्षा है कि वह अपने जीवन को भगवती सीता के समान पवित्र, भक्तिपूर्ण और सर्वसह बनाये। सीताजी और भगवान श्रीरामचन्द्र के चरित्रों के अध्यन से भारतीय आदर्श का पूर्ण ज्ञान हो सकता है। जीवन के पाश्चात्य और भारतीय आदर्शों में भारी अन्तर है। सीताजी का चरित्र हमारी जाति के लिए सहनशीलता का आदर्श है। पाश्चात्य संस्कृति कहती है कि तुम यन्त्रवत् कार्य में लगे रहो और अपनी शक्ति का परिचय कुछ भौतिक ऐश्वर्य प्राप्त करके दिखाओ। भारतीय आदर्श, इसके विपरीत, कहता है कि तुम्हारी महानता दुःखों को सहन करने की शक्ति

1. सिंह, सविता, ''नारी शक्ति का प्रतीक'', गाँधी स्मृति एवं दर्शन स्मृति, पृ. सं. 36।

में है। पाश्चात्य आदर्श अधिक से अधिक जन-सम्पति के संग्रह में गर्व करता है, भारतीय आदर्श हमें अपनी आवश्यकताओं को न्यून-से-न्यून कर जीवन को सरलतापूर्वक व्यतीत करना सिखाता है। इस प्रकार पूर्व और पश्चिम के आदर्शों में दो ध्रुवों का अन्तर है। माता सीता भारतीय आदर्श की प्रतीक है।

कई लोग प्रश्न करते हैं कि क्या सीता और राम की कथा में कोई ऐतिहासिक तथ्य है, क्या वास्तव में सीता नाम की किसी स्त्री ने विश्व में जन्म लिया था ? हमें इस वाद-विवाद में पड़ने की कोई आवश्यकता नहीं। हमारे लिए तो इतना ही जानना पर्याप्त है कि सीताजी का आदर्श मानवमात्र के लिए परम उज्ज्वल रूप में दीप्तिमान हो रहा है। आज सीताजी के आदर्श के सदृश ऐसी कोई अन्य पौराणिक कथा नहीं है, जिसे समस्त राष्ट्र में इतना आत्मसात् कर लिया हो, जो उसके जीवन के साथ इतनी एकाकार हो गयी हो और उसके जातीय रक्त में इस प्रकार धुल-मिल गयी हो। भारत में माता सीता का नाम पवित्रता, साधुता और विशुद्ध जीवन का प्रतीक है : वह स्त्री के अखिल गुणों का जीवित जाग्रत आदर्श है।

भारत में कोई गुरू अथवा सन्त जब किसी स्त्री को आशीर्वाद देते हैं, तो कहते हैं कि, तुम सीताजी के समान बनो : और जब वे किसी बालिका को आशीर्वाद देते हैं, तब भी यही कहते हैं सीताजी का अनुकरण करो। क्या स्त्रियाँ, क्या बालिकाएँ सभी सीता माता की सन्तान हैं और वे सब माता सीता के समान धीर, चिरपवित्र, सर्वसह और सतीत्वमय जीवन बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

भगवती सीताजी को पद-पद पर यातनाएँ और कष्ट प्राप्त होते हैं, परन्तु उनके श्रीमुख से भगवान रामचन्द्र के प्रति एक भी कठोर शब्द नहीं निकलता। सब विपत्तियों और कष्टों का वे कर्त्तव्य-शुद्धि से स्वागत करती है और उसे भलीभांति निभाती हैं। उन्हें भंयकर अन्यायपूर्वक वन में निर्वासित कर दिया जाता है, परन्तु उसके कारण उनके हृदय में कटुता का लवलेश भी नहीं। यही सच्चा भारतीय आदर्श है।

परन्तु मध्यकाल में स्त्रियों की स्थिति ज्यादा सुदृढ़ नहीं थी, क्योंकि उस काल में उनकी शिक्षा पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। जहाँ-तहाँ छोटी-छोटी लड़कियाँ मस्जिदों से सम्बद्ध मकतबों में जाकर कुछ प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण कर लेती थीं, किन्तु उच्च शिक्षा प्राप्ति तक तो वे पहुँच ही नहीं पाती थीं। यत्र-तत्र कोई अमीर या शासक अपनी पुत्री की शिक्षा के लिए घर पर ही प्रबन्ध कर देता था। इसलिए तो उन्नीसवीं शताब्दी में स्त्रियों की साक्षरता का प्रतिशत केवल 1% था तथा पुरुषों की साक्षरता का प्रतिशत 25% था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने स्त्री-शिक्षा को अनावश्यक समझकर उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। सम्भवतः इसका कारण यह था कि उसे अपने प्रशासकीय एवं व्यावसायिक कार्यालयों के लिए शिक्षित महिलाओं की आवश्यकता नहीं थी।

परन्तु स्वतन्त्र भारत में 'भारतीय संविधान' ने नारी को समकक्षता प्रदान करते हुए कहा है कि - ***"राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।"***

समाज को राष्ट्र की एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में हम देखते हैं। समाज में जिस प्रकार पुरुषों को महत्वपूर्ण माना जाता है वैसे ही वर्तमान सन्दर्भ में नारी का स्थान अद्वितीय है। इसी वजह से प्राचीन काल से आज तक नारी को सम्माननीय दृष्टि से देखा जाता है। समाज में महिलाओं को उचित ओहदा एवं उचित स्थान दिलाने के लिए उन्हें संगठित रूप में, शक्ति के रूप में आज प्रस्तुत किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। सन् 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित किया जाना भी इसी कदम को आगे बढ़ाने का प्रयास है। आज नारी, पुरूष प्रधान समाज में पुरुषों से कन्धे से कन्धा मिलाकर चल रही है। यह और बात है कि समाज ने उसे अभी भी पुरुषों के समान अधिकार नहीं दिये हैं। कहीं ये अधिकार मिल भी गये हैं तो नारी उसका लाभ नहीं उठा पायी है।

इसके अलावा भी महिला सशक्तिकरण के लिए अनेक कानून बने हैं फिर भी महिलाओं की स्थिति ज्यादा अच्छी नहीं है। नित नए कानूनों की आवश्यकता है। महिलाओं के लिए कानून बनाने की बजाय यदि सरकार शिक्षा प्रसार का प्रयास करे तो महिला हर क्षेत्र में स्वयं ही आगे बढ़ जायेगी। शिक्षित होने के कारण ही महिलाओं को चाँद पर जाने में और एवरेस्ट की ऊंचाई को नापने में भी किसी प्रकार की हिचकिचाहट नहीं हुई। कल्पना चावला एवं बछेन्द्री पाल इसका ज्वलंत उदाहरण हैं। उन्होंने कलयुग में अवतार लेकर देश का गौरव और नारी का सम्मान बढ़ाकर इतिहास में अपना नाम अंकित किया है, पर आज भी अगर यह पता चल जाता है कि गर्भ में पल रहा जीव कन्या है, तो उसे दुनियाँ में आने से पहले ही खत्म कर दिया जाता है। आखिर समाज की यह मानसिकता कब बदलेगी। जबकि नारी ने पुरुषों से दस कदम आगे बढ़कर ऐसी पृष्ठभूमि का निर्माण किया है, जो समाज की विसंगतियों को दूर कर युवा मन की कुंठाओं की ग्रन्थियों को खोल कर समाज को नई दिशा देने में सहायता कर रही है। इस तरह के असंख्य उदाहरण एवं प्रमाण हैं जिनसे सिद्ध होता है कि प्राचीन समय में आदर्शवादी नारियों ने अपनी प्रतिभा, क्षमता और योग्यताओं का लाभ समाज को देने के लिए बढ़ चढ़ कर योगदान दिये हैं। इसलिए आवश्यक है कि इनकी समस्याओं को भी सूक्ष्मता से देखा जाए।[2]

समाज में स्त्री की समस्या एकांगी नहीं है। इनको समाज से अलग रखकर शक्ति प्रदान नहीं की जा सकती है। कभी-कभी मात्र स्त्री के ध्यान न देने पर पुरूष की तरफ से विरोध प्रकट किया जाता है परन्तु सच तो यह है कि स्त्री परिवार की धुरी है। वह सशक्त होती है तो पूरा परिवार सशक्त होता है।[3]

2. राजस्थान पत्रिका, अक्टूबर, 2006।
3. स्वप्निल सारस्वत, महिला विकास, प्रथम संस्करण, दिल्ली, पृ. सं. 126।

सचराचर तमाम सृष्टि नर-नारीमय है। जीव-जगत ही नहीं, वस्तु-जगत भी जिसे निर्जीव और जड़ माना जाता है, इस आदि द्वैत से व्याप्त है। यही द्वैत सृष्टि को सचल और सक्रिय रखता है। जिस क्षमता से नर-नारी नामक तत्वों का यह द्वित्व सृष्टि को धारण रख रहा है और चला रहा है उसका आधार है इस द्वैत में व्याप्त अद्वैत, इन भिन्नों के भीतर रम्यमाण अभिन्न।

नर-नारी दो हैं, पर दो नहीं है। अदम्य चेष्टा है उनमें एक हो जाने की। इस प्रयास में से नाना प्रकार की परम्पराओं को जन्म मिलता है। इन सम्बन्धों में अंतःविरोधों का पार नहीं। यों प्राणी सम प्रतीत होते हैं, लेकिन क्षमता प्राप्त होती है उन्हें अपनी विषमता के कारण। सच में सम वे बना दिये जायें तो जीने का सब स्वाद ही समाप्त हो जाये। जीवन का सारा रस, उसकी लीला, उसका आनन्द, इस विषमता में से रंग-रूप पाता है। विषम है, इसी से दोनों आकर्षण अनिवार्य है। इस बीच का व्यवधान अनंत सम्भावनाओं से भरा रहता है। गहरे में प्रेम के भीतर घृणा का बीज पा लिया गया है। आकर्षण और विकर्षण साथ चलते हैं। अंतविरोधों से भरा यह बीज का द्वैत क्या-क्या नाटक हमारे समक्ष प्रस्तुत नहीं कर पायेगा, कहा नहीं जा सकता। द्वैतात्मक इस सृष्टि के रूप की गहनता का पार कोई नहीं पा सकता है।